ISSN 2277-5897 SABLOG
PEER REVIEWED JOURNAL

147

लोक चेतना का राष्ट्रीय मासिक

सबलोग

मई 2026 • ₹ 50

युद्ध की दुनिया और शान्ति का स्वप्न

- अँधेरा, बाजार और बदलती संस्कृति
- सबाल्टर्न दृष्टि-सम्पन्न योद्धा आलोचक
- वैश्विक उत्कृष्टता की ओर इरिमी

सबलोग-147

वर्ष 17, अंक 5, मई 2026

ISSN 2277-5897 SABLOG

PEER REVIEWED JOURNAL

www.sablog.in

सम्पादक

किशन कालजयी

संयुक्त सम्पादक

प्रकाश देवकुलिश

राजन अग्रवाल

उप-सम्पादक

गुलशन चौधरी

समीक्षा समिति

(Peer Review Committee)

आनन्द कुमार

रत्नेश्वर मिश्र

मणीन्द्र नाथ ठाकुर

मंजु रानी सिंह

सफदर इमाम कादरी

प्रमोद मीणा

राजेन्द्र रवि

मधुरेश

महादेव टोप्पो

विजय कुमार

आशा

सन्तोष कुमार शुक्ल

अखलाक 'आहन'

अभय सागर मिंज

सम्पादकीय सम्पर्क

बी-3/44, तीसरा तल, सेक्टर-16,
रोहिणी, दिल्ली-110089

+918340436365

sablogmonthly@gmail.com

सदस्यता शुल्क

एक अंक : 50 रुपये

वार्षिक : 1100 रुपये रजिस्टर्ड डाक से

सबलोग

खाता संख्या-49480200000045

बैंक ऑफ बड़ौदा,
शाखा-बादली, दिल्ली

IFSC-BARB0TRDBAD
(Fifth Character is Zero)

स्वामी, सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक किशन कालजयी द्वारा बी-3/44, सेक्टर-16, रोहिणी, दिल्ली-110089 से प्रकाशित और लक्ष्मी प्रिण्टर्स, 556 जी.टी. रोड शाहदरा दिल्ली-110032 से मुद्रित।

पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के हैं, उनसे सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं।

पत्रिका अव्यावसायिक और सभी पद अवैतनिक।

पत्रिका से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए न्यायक्षेत्र दिल्ली।

संवेद फाउण्डेशन का मासिक प्रकाशन

युद्ध की दुनिया और शान्ति का स्वप्न

मुनादी / युद्ध के अँधेरे में शान्ति की रोशनी: **किशन कालजयी** 3

युद्ध, मनुष्यता और संवेदना का क्षरण : **सेवाराम त्रिपाठी** 5

आइंस्टीन और गाँधी की नजर में युद्ध : **अरुण कुमार त्रिपाठी** 7

युद्ध और मीडिया : **प्रमोद मीणा** 10

युद्ध के खिलाफ प्रतिरोध की आवाज : **गीता दूबे** 13

आर्थिक हित और युद्ध : **सर्वेश कुमार मौर्य** 16

स्त्री-देह पर लिखी गयी क्रूर कहानी : **सुप्रिया पाठक** 19

युद्ध, पर्यावरण और भविष्य का संकट : **सुरेश के. तिवारी** 22

धर्म, पहचान और हिंसा : **मोहसिना बानो** 24

कला, युद्ध और मनुष्य की जिजीविषा : **पी. कुमार मंगलम** 26

युद्ध का मनोविज्ञान और शान्ति : **आनन्द कुमार राय** 28

साक्षात्कार

युद्ध के भीतर युद्धरत स्त्री : **नासिरा शर्मा** से **रक्षा गीता** की बातचीत 30

सृजनलोक

पाँच कविताएँ : **मानस भारद्वाज,** टिप्पणी : **निशान्त**
रेखांकन : **विनोद कुमार राज 'विद्रोही'** 34

स्तम्भ

चतुर्दिक / किस दिन होगी मुक्त भूमि रण-भीति से : **रविभूषण** 36

तीसरी घण्टी / वर्तमान समय में दलित रंगमंच की चुनौतियाँ : **राजेश कुमार** 40

यत्र-तत्र / युद्ध के विरुद्ध आर्तनाद : **जय प्रकाश** 43

परती परिकथा / अँधेरा, बाजार और बदलती संस्कृति : **हितेन्द्र पटेल** 46

देशान्तर / नेपाल, युवा और राजनीतिक पुनर्संरचना : **रक्षा कुमारी झा** 49

विविध

स्मरण / सबाल्टर्न दृष्टि-सम्पन्न योद्धा आलोचक : **नवीन जोशी** 52

सामयिक / वैश्विक उत्कृष्टता की ओर इरिमी : **कुमार कृष्णन** 55

किताब / धर्म, संस्कृति और राजनीति के अन्तःसम्बन्ध : **रूपेश कुमार यादव** 57

लिये लुकाठी हाथ / आगे नेता, पीछे शर्म : **गिरीश पंकज** 58

रंगसाज/ रंगों में दर्ज एक दुनिया : **शेखर** 59

आवरण : शशिकान्त सिंह

अक्षर संयोजन: आशीष कुमार पाठक

अगला अंक : संघ, सरकार और साम्प्रदायिकता

युद्ध के अँधेरे में शान्ति की रोशनी

मानव सभ्यता का इतिहास जितना निर्माण और सृजन का है, उतना ही वह संघर्ष और विनाश का भी रहा है। मनुष्य ने नगर बसाये, ज्ञान और विज्ञान की अद्‌भुत उपलब्धियाँ हासिल कीं, लेकिन साथ ही उसने युद्धों के माध्यम से अपनी ही सभ्यता को बार-बार क्षतिग्रस्त भी किया। इसीलिए युद्ध केवल राजनीतिक या सैन्य घटना नहीं होता; वह मानवता की नैतिक चेतना की भी परीक्षा होता है।

रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्यों में युद्ध का वर्णन अवश्य है, लेकिन वे युद्ध का महिमामण्डन नहीं करते। रामायण में युद्ध का आधार व्यक्तिगत प्रतिशोध नहीं, बल्कि नैतिक व्यवस्था की रक्षा है। राम और रावण के बीच संघर्ष केवल सीता-हरण की घटना तक सीमित नहीं है; बल्कि यह मर्यादा और अहंकार, संयम और अतिक्रमण के बीच संघर्ष का प्रतीक है। महाभारत का युद्ध केवल सत्ता का संघर्ष नहीं था; वह धर्म और अधर्म, न्याय और अन्याय के बीच टकराव का प्रतीक था। फिर भी इस युद्ध के आरम्भ में अर्जुन का विषाद और युद्ध के बाद युधिष्ठिर का पश्चाताप हमें यह याद दिलाता है कि विजय भी अन्ततः मनुष्य को शान्ति नहीं दे पाती।

इस्लामी परम्परा में भी युद्ध को कभी प्राथमिक विकल्प के रूप में स्वीकार नहीं किया गया। पैगम्बर मुहम्मद के जीवन से यह स्पष्ट होता है कि मक्का के दौर में धैर्य और सहिष्णुता पर बल दिया गया, जबकि मदीना में युद्ध की अनुमति केवल आत्मरक्षा और उत्पीड़न के प्रतिरोध की स्थिति में दी गयी। हुदैबिया की सन्धि इस बात का उदाहरण है कि दूरदर्शी नेतृत्व तात्कालिक विजय के बजाय स्थायी शान्ति को अधिक महत्त्व देता है। यदि हम अन्य धार्मिक परम्पराओं की ओर देखें तो एक उल्लेखनीय समानता दिखाई देती है। गौतम बुद्ध और महावीर ने अहिंसा को जीवन का सर्वोच्च सिद्धान्त माना। यीशु मसीह ने प्रेम और क्षमा को मानव-सम्बन्धों की आधारशिला बताया। सिख परम्परा में 'सन्त-सिपाही' का आदर्श यह स्पष्ट करता है कि शस्त्र केवल अन्याय के प्रतिरोध का अन्तिम साधन हो सकता है, न कि शक्ति-प्रदर्शन का माध्यम। इन सभी परम्पराओं का साझा निष्कर्ष यही है कि हिंसा को सीमित करना और शान्ति को अन्तिम लक्ष्य मानना ही मानवता का मार्ग होना चाहिए।

भारत में युद्ध का स्वरूप समय के साथ निरन्तर बदलता रहा है। महाजनपद काल (लगभग 600 ईसा पूर्व) में मगध जैसे शक्तिशाली राज्यों के उदय के साथ युद्ध राज्य-विस्तार और शक्ति-सन्तुलन का प्रमुख माध्यम बना। मौर्य काल में यह प्रवृत्ति अपने चरम पर पहुँची। विशेषतः कलिंग युद्ध ने सम्राट अशोक के जीवन में गहरा नैतिक परिवर्तन किया, जिसके बाद उन्होंने हिंसा त्यागकर बौद्ध धर्म और अहिंसा का मार्ग अपनाया। यह उदाहरण दर्शाता है कि युद्ध केवल विनाश ही नहीं, बल्कि वैचारिक रूपान्तरण का कारण भी बन सकता है। गुप्त काल में अपेक्षाकृत शान्ति रही, हालाँकि सीमाओं की रक्षा हेतु सैन्य-शक्ति का महत्त्व बना रहा।

मध्यकाल में युद्ध अधिक जटिल हो गये। महमूद गजनवी और मुहम्मद गौरी के आक्रमणों ने भारतीय राजनीति को बदल दिया, जिसके परिणामस्वरूप दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य की स्थापना हुई। अकबर जैसे शासकों ने युद्ध के साथ कूटनीति और प्रशासनिक सुधारों को भी महत्त्व दिया। इस दौर में युद्ध सत्ता के साथ-साथ सांस्कृतिक समन्वय का माध्यम भी बना।

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद मराठा, सिख और अन्य क्षेत्रीय शक्तियों का उदय हुआ। छत्रपति शिवाजी ने गुरिल्ला युद्ध-पद्धति को प्रभावी बनाया, जबकि महाराजा रणजीत सिंह ने सिख साम्राज्य की स्थापना की। इस समय युद्ध विकेन्द्रीकृत और निरन्तर संघर्षपूर्ण हो गये।

औपनिवेशिक काल में युद्ध का स्वरूप विदेशी सत्ता के विरुद्ध प्रतिरोध में बदल गया। प्लासी और बक्सर के युद्धों ने ब्रिटिश शासन की नींव रखी, जबकि 1857 का विद्रोह स्वतन्त्रता-चेतना का प्रारम्भिक स्रोत बना।

बीसवीं सदी के दो विश्वयुद्ध मानव इतिहास की सबसे बड़ी त्रासदियों में गिने जाते हैं। प्रथम विश्वयुद्ध (1914-1918) के पीछे यूरोपीय साम्राज्यवाद, उग्र राष्ट्रवाद और सैन्य गठबन्धनों की प्रतिस्पर्धा की जटिल राजनीति थी। ऑस्ट्रिया के युवराज फ्रांज फर्डिनेण्ड की हत्या इस संघर्ष की चिनगारी बनी, किन्तु वास्तविक कारण महाशक्तियों के बीच शक्ति-सन्तुलन की उस राजनीति में छिपे थे, जो हथियारों की दौड़ और युद्ध की तैयारी को ही सुरक्षा का आधार मानती थी। इस युद्ध में करोड़ों लोग मारे गये और यूरोप के कई बड़े साम्राज्य ढह गये।

युद्ध के बाद वर्साय सन्धि के माध्यम से शान्ति स्थापित करने का प्रयास किया गया, लेकिन इस सन्धि ने जर्मनी के भीतर अपमान और प्रतिशोध की भावना को जन्म दिया। यही असन्तोष आगे चलकर द्वितीय विश्वयुद्ध (1939-1945) की पृष्ठभूमि बना। जर्मनी में हिटलर और इटली में मुसोलिनी जैसे तानाशाहों ने उग्र राष्ट्रवाद और विस्तारवादी राजनीति को बढ़ावा दिया। परिणाम मानव इतिहास की सबसे भयावह तबाही के रूप में सामने आया—करोड़ों लोगों की मृत्यु, यूरोप और एशिया के अनेक शहरों का विनाश और अन्ततः हिरोशिमा तथा नागासाकी पर परमाणु बम का इस्तेमाल।

इन विश्वयुद्धों को केवल किसी एक नेता के पागलपन का परिणाम मान लेना इतिहास को सरल बना देना होगा। हिटलर की विचारधारा विनाशकारी थी, लेकिन उसके पीछे आर्थिक संकट, साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा और राष्ट्रवादी उन्माद की व्यापक राजनीतिक पृष्ठभूमि भी थी। दूसरे शब्दों में, युद्ध केवल व्यक्तियों के निर्णयों से नहीं, बल्कि उस व्यवस्था से भी पैदा होते हैं, जिसमें शक्ति और प्रभुत्व को सर्वोच्च मूल्य माना जाता है।

दक्षिण एशिया का इतिहास भी इस सच्चाई से अछूता नहीं है। भारत और पाकिस्तान के बीच 1947 के विभाजन के बाद से कई युद्ध हो चुके हैं—1947-48, 1965 और 1971 के युद्ध तथा 1999 का कारगिल संघर्ष। इन युद्धों के मूल में सीमा-विवाद, कश्मीर प्रश्न और पारस्परिक अविश्वास की राजनीति रही है। 1971 का युद्ध विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण था, जिसके परिणामस्वरूप बाँग्लादेश का जन्म हुआ। इन संघर्षों ने यह भी दिखाया कि युद्ध का वास्तविक बोझ सैनिकों के साथ-साथ आम नागरिकों को भी उठाना पड़ता है। बीते वर्षों में पाकिस्तान समर्थित आतंकी कार्रवाइयों ने इस अविश्वास को और गहरा किया है। पहलगाम जैसी घटनाएँ—जहाँ निर्दोष लोगों को उनकी पहचान के आधार पर निशाना बनाया गया—सिर्फ सुरक्षा का प्रश्न नहीं उठातीं, बल्कि मनुष्यता के बुनियादी मूल्यों को भी कठघरे में खड़ा करती हैं।

वियतनाम युद्ध का अनुभव आधुनिक इतिहास की एक बड़ी चेतावनी है। शीतयुद्ध की वैचारिक राजनीति में उलझकर अमेरिका ने दक्षिण-पूर्व एशिया में साम्यवाद के विस्तार को रोकने के नाम पर वियतनाम में हस्तक्षेप किया। 'डोमिनो सिद्धान्त' के आधार पर शुरू हुआ यह युद्ध धीरे-धीरे एक विशाल सैन्य संघर्ष में बदल गया। लाखों सैनिकों की तैनाती और भीषण बमबारी के बावजूद अमेरिका निर्णायक विजय प्राप्त नहीं कर सका। 1975 में 'साइगॉन' के पतन के साथ यह युद्ध समाप्त हुआ और दुनिया ने एक बार फिर देखा कि सैन्य-शक्ति हमेशा राजनीतिक समाधान नहीं दे सकती।